Impact Factor-7.675 (SJIF)

ISSN-2278-9308

B.Aadhar

Peer-Reviewed & Refreed Indexed

Multidisciplinary International Research Journal

January -2021

ISSUE No- (CCLXX) 270

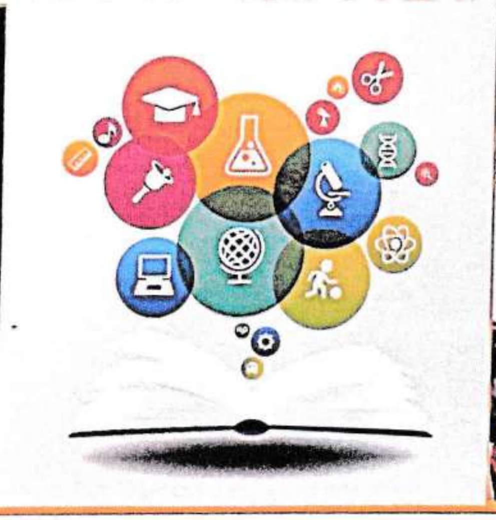

Chief Editor
Prof. Virag S. Gawande
Director
Aadhar Social
Research & Development
Training Institute Amravati

Editor:
Dr.Dinesh W.Nichit
Principal
Sant Gadge Maharaj
Art's Comm,Sci Collage,
Walgaon.Dist. Amravati.

Executive Editor:
Dr.Sanjay J. Kothari
Head, Deptt. of Economics,
G.S.Tompe Arts Comm,Sci Collage
Chandur Bazar Dist. Amravati

This Journal is indexed in :
- Scientific Journal Impact Factor (SJIF)
- Cosmos Impact Factor (CIF)
- International Impact Factor Services (IIFS)

For Details Visit To : www.aadharsocial.com

Aadhar Publications

ISSN : 2278-9308
January, 2021

20	आंबेडकरी विचारकाव्य एक विहंगमावलोकन प्रा.डॉ.स्मिता शेंडे	88
21	फळबाग लागवड तंत्र प्रा. डॉ.संतोष एन.ताडे	96
22	जगाच्या इतिहासात धम्मपद हा ग्रंथ अमूल्य ज्ञानाचा सागर आहे. डॉ. अजय खडसे	98
23	जागतिकीकरणोत्तर दलित कविता डॉ. सुनील अभिमान अवचार	101
24	भारतातील महिला विकास संबंधी योजनांचे अध्ययन प्रा. डॉ. सुनिता श्रीकृष्ण बाळापुरे	108
25	कोविड २०१९ चा भारतीय कृषी अर्थव्यवस्थेवरील परीणाम दिपक एन. काळे	112
26	भारतीय अर्थव्यवस्थेमध्ये रुपयाचे अवमुल्यन होण्याची कारणे डॉ. केशव सुर्यभानसा गुल्हाने	116
27	लोकशाहीतील स्त्रियांचा दर्जा कल्पना बंडीवार	119
28	१९९० नंतरचे समाजवास्तव व मराठी कवितेचे स्वरूप प्रा. मनीषा नामदेव बनसोडे	122
29	लोककल्याणकारी राज्य की निर्मिती में राजनिती के निर्देशक सिद्धांतों का महत्व डॉ.विभा प्र.देशपांडे	125
30	पारंपारिक स्त्री से आधुनिक स्त्री तक: एक प्रवास डॉ. फरहिना शिरीन नसिरोद्दीन	128
31	दिव्यांग व्यक्तियों का वर्तमान परिदृश्य विवेक संतोषराव गोर्लावार	134
32	हिंदी के आँचलिक उपन्यास और उनका महत्व लेफ्टनंट डॉ. रविंद्र पाटील	142

B.Aadhar' International Peer-Reviewed Indexed Research Journal
Impact Factor - ((SJIF) -7.675, Issue NO. 270 (CCLXX)
ISSN : 2278-9308
January, 2021

हिंदी के आँचलिक उपन्यास और उनका महत्त्व

लेफ्टनंट डॉ. रविंद्र पाटील
अध्यक्ष, हिंदी विभाग,राजर्षि छत्रपति शाहू कॉलेज, कोल्हापुर
(महाराष्ट्र) ४१६००३

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारतीय जनमानस में अनेक परिवर्तन दृष्टिगोचर होते हैं। भुमंडलीकरण के चलते मानवी मूल्यों का ऱ्हास होता चला गया। समाज में टूटन, भ्रष्टाचार, आर्थिक शोषण, भ्रष्टराजनीति, घुटन, हिंसात्मकता जैसी प्रवृति बढ़ती गई। इससे साहित्य भी अछूता नहीं रहा। इसका प्रभाव गाँवो तथा अँचलों पर भी हुआ। इसीसे निर्मित सृजन का एक सशक्त माध्यम है आँचलिक साहित्य। आँचलिक उपन्यासकारों नें साहित्य को गाँवो की मिट्टी से जोडने का प्रामाणिक एवं सही प्रयास किया है। अँचलो में अनेक परिवर्तन होने के बावजुद भी भारतीय संस्कृति की सच्ची तश्वीर छुपी हुई है।

'आँचलिकता' को लेकर अनेक विद्वानों ने अपने अपने मत प्रकट किए हैं। अंग्रेजी में इसे 'रीजनॅलिज्म' कहा जाता है। मराठी में 'प्रादेशिक साहित्य' कहा जाता है। डॉ. ह.के.कड़वे आँचलिकता की परिभाषा इस प्रकार करते हैं, "अँचल विशेष के जन-जीवन एंव जन संस्कृति का प्राकृतिक पार्श्वभूमि में रेखांकन करने की साहित्य की जो एक विशिष्ट प्रवृति है वही आँचलिकता है।"[1] इसमें सांस्कृतिक परिवेश एवं प्राकृतिक परिवेश को अधिक महत्त्व दिया गया है। डॉ. विवेकी राय ने इसका संबंध कथा-साहित्य के कलापक्ष एवं संरचना से जोड़ा है। वहीं दूसरी ओर डॉ.नगीना जैन आँचलिकता को भौगोलिक एवं सांस्कृतिक खोज के रूप में स्वीकार करते हैं। आँचलिकता के अंतर्गत किसी सीमित प्रदेश को केंद्र में रखकर उसके सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, तथा खास तौर पर सांस्कृतिक जीवन को उद्घाटित किया जाता है।

हिंदी साहित्य के विकास यात्रा में आँचलिक उपन्यासों को विशिष्ठ महत्त्व है। क्योंकि इसमें वास्तविकता को महत्त्व दिया जाता है।

आँचलिक उपन्यासों ने उपेक्षित अँचलों को साहित्यिक मंच दिया है। 'भारतीय साहित्य कोश' के अंतर्गत इसे स्वतंत्रताप्राप्ति के बाद की उपलब्धि मानी गयी है। परंतु आँचलिक उपन्यास की झलक सन १८८० में प्रकाशित लाला श्रीनिवासदास कृत 'परीक्षा गुरू' से ही दिखाई देता है। 'भारतीय संस्कृति कोश' के अंतर्गत इसके विकासक्रम के संदर्भ में लिखा है, "हिंदी आँचलिक उपन्यास स्वतंत्रताप्राप्ति के बाद की उपलब्धि है। यद्यपि आँचलिक उपन्यास हिंदी में

...national Peer-Reviewed Indexed Research Journal
Impact Factor - ((SJIF) -7.675, Issue NO, 270 (CCLXX)
ISSN : 2278-9308
January, 2021

फणीश्वरनाथ रेणू के 'मैला अँचल' (१९५४) के प्रकाशन के उपरांत ही प्रचलित हुआ तथापि उसका अभ्युदय नागार्जुन के 'बलचनमा' से माना जाता है और आभास उससे भी पूर्व प्रेमचंद, वृंदावनलाल वर्मा, नागार्जुन, अमृतलाल नागर, की कृतियों में मिलता है।"[२] कोई भी साहित्यिक प्रवृत्ति किसी विशिष्ठ काल से विकसित नहीं होती; उसकी विकास के लिए प्रदिर्घ कालखंड लगता है। रेणूजी हिंदी आँचलिक साहित्य के 'माईल स्टोन' है। इसी के चलते हिंदी आँचलिक उपन्यास साहित्य को रेणू पूर्व युग (सन १८९३ से सन् १९५१ तक) रेणू युग (सन १९५२ से सन १९६६ तक) रेणुत्तर युग (सन् १९६७ से १९९० तक) आदि कालखंडों में विभाजित किया गया है।

रेणू पूर्व युग (सन १८९३ से सन १९५१ तक) भुवनेश्वर मिश्र 'धराऊ घटना', 'बलवंत भूमिहार', जगन्नाथ प्रसाद चतुवैदी का 'वसंत मालती' (१८९९) हरिऔंध 'अधलिखा फूल' (१९०७) आदि उपन्यासों की रचना हुई परंतु इसमें मन्नन द्विवेदी लिखित, 'रामलाल' (१९१४) उपन्यास ही आँचलिक उपन्यासों की कोटि में सही वैठता है। सन् १९३६ में प्रकाशित प्रेमचंद के 'गोदान' में आँचलिक उपन्यास के वहुत सारे तत्व दृष्टिगोचर होते हैं। नागार्जुन का 'रतिनाथ की चाची' (१९४४) में आँचलिकता के दर्शन होते हैं। 'रामलाल', 'देहाती दूनिया', 'गोदान' जैसी रचनाओं ने आँचलिक उपन्यासों की निवं डाली है।

रेणू युग (सन् १९५२ से सन् १९६६) कालखंड को हिंदी आँचलिक उपन्यासों में रेणू युग से जाना जाता हैं। इसके अंतर्गत आँचलिक उपन्यास का सही विकास हुआ। रेणू के 'मैला अँचल' ने आँचलिक साहित्य को उच्चकोटि पर पहुँचाया था। बिहार के पूर्णिया जिले का 'मेरीगंज' इसके केंद्र में रहा। इसके अतिरिक्त देवेंद्र सत्यार्थी के 'रथ के पहिए' (१९५३) में मध्य प्रदेश के कारंजिया अँचल में रहनेवाले आदिवासी गोंड जाति का चित्रण है। यह एक सफल जनजातिमूलक उपन्यास है। रांगेय राघव का 'कब तक पुकारूँ,' (१९५८) में प्रकाशित एक बृहत आँचलिक उपन्यास है। उपन्यास के केंद्र में राजस्थान और ब्रज प्रदेश की सीमा पर बसे वैरगाँव और उसके आस-पास का क्षेत्र है। इसमें करनट जाति के सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवेश का सजीव चित्रणा हुआ है। इसके संदर्भ में डॉ. राधेश्याम कौशिक लिखते हैं, "पांडेपुखा की भौगोलिक स्थिति का चित्रण स्थानीय भाषा का प्रयोग, संस्कृति के विभिन्न पक्षों का उभार, 'पानी के प्राचीर' में आँचलिक रस को प्रवाहित करने में महत्वपूर्ण रहे हैं।"[३] पांडेय बेचन शर्मा का 'फागुन के चार दिनचार' (१९५५), उपेंद्रनाथ अश्क का 'पत्थर अल पत्थर' राजेंद्र अवस्थी का 'सूरज किरण की छांव' (१९५९), योगेंद्र सिन्हा का 'वन के मन में' (१९६२) आदि हिंदी के प्रतिनिधि रचनाकारों के रचनाओं में आँचलिक तत्वों का सफल अंकन हुआ है। रेणू युग ने अँचल जीवन के विविध आयामों को उद्घाटित किया है।

रेणुत्तर युग (सन् १९६७ से सन १९०० तक) इस कालखंड में आँचलिक उपन्यासों का विकास बड़ी तेजी से हुआ है। इसमें परिवर्तनशील आँचलिक जीवन को तराशने का सफल प्रयास हुआ है। शानी का 'शालवनों का द्विप' बहुचर्चित उपन्यास है। श्रीलाल शुक्ल के 'राग दरबारी' (१९६८) में शिवपाल गंज के माध्यम से भारतीय ग्राम जीवन की मूल्यहीनता को प्रस्तुत किया है। आनंद प्रकाश जैन के 'आँठवी भँवर' (१९६९) में उत्तर प्रदेश के गोसाई जनजातिका चित्रण स्वाभाविक रूप से हुआ है। यादवेंद्र शर्मा का 'हजार घोडों का सवार' (१९७३) राजस्थानी लोकजीवन को दर्शानेवाला जीवंत दस्तावेज है। इसके संदर्भ में कृष्णकुमार बिस्सा लिखते हैं, "हजार घोडों का सवार' उपन्यास दलित वर्ग की व्यथा, उपेक्षा और सामाजिक स्थितियों का चित्रण करनेवाला महाकाव्यात्मक उपन्यास है।" जगदीशचंद्र माथुर का, 'धरती धन अपना' (१९७२) में पंजाब के होशियारपुर जिले के घोडवाहा अँचल का चित्रण है। इसके केंद्र में चमार जाति है। अभिमन्यु अनंत के 'एक बीघा प्यार' (१९७२) अपने आप में एक अनोखा प्रयास है। इस में आँचलिकता के नए क्षितिजों का उद्घाटन हुआ है। मॉरिशस के लोकजीवन को हिंदी में वाणी देने का प्रयास हुआ है। डॉ. विवेकी राय के 'सोनामाटी' (१९८३) उपन्यास में गाजीपुर-बलिया के संधिस्थल पर स्थित 'करइल' अँचल के जनजीवन का सुंदर चित्रण हैं। इसके संदर्भ में स्वयंलेखक लिखते हैं, "सोनामाटी, आँचलिक उपन्यास है, क्योंकि उसमें कुछ ऐसी प्रथाएँ, कुछ ऐसी परंपराएँ, कुछ ऐसे लोकजीवन के चित्र हैं जो एक विशेष क्षेत्र के हैं।"[५] इनके अलावा तिलकराज गोस्वामी का 'चंदनमाटी' (१९८६), अव्दुलबिस्मिलाह का 'झीनी झीनी बीनी चदरिया' (१९८६), 'संजीव का धार' (१९९०), 'सावधान नीचे आग है' (१९८८), मिथिलेश्वर, 'युद्स्थल', (१९९१), भगवानदास मोरवाल का 'काला पहाड', आदि उपन्यासों में आँचलिकता का सुंदर चित्रण हैं।

आँचलिक उपन्यासों का महत्व:-

आँचलिक साहित्यकार अँचल का चित्र प्रस्तुत करते समय वास्तविकता को अपनाता है। भारतीय संस्कृति की सच्ची तश्वीर आँचलिकता में छुपी है। उसका प्राणतत्व लोकसंस्कृति है। पिछडापन, संघर्ष, अर्थ की समस्या, प्रकृति सौंदर्य जैसी वाते उद्घाटित होते हैं। रचनाकार आँखों देखी को प्रामाणिकता से स्पष्ट करने की कोशिश करता है। आँचलिक उपन्यासों के महत्व के संदर्भ में डॉ. बच्चन सिंह लिखते हैं, "उपन्यास साहित्य विशेपकर आँचलिक उपन्यास यथार्थ की भूमि को छोडकर नहीं चल सकता क्योंकि किसी कृति में आँचलिकता उस क्षेत्र विशेष के यथार्थ जीवन पर दृष्टि होने पर अवतारित होती है।"[६]

आँचलिक उपन्यासों में अँचल के लोगों की खान-पान, रहन-सहन, वेशभूषा, लोकनृत्य, लोकगीत, लोकसाहित्य, आदि बातों का वास्तविक वर्णन होता है।

B.Aadhar International Peer-Reviewed Indexed Research Journal | ISSN : 2278-9308 January, 2021
Impact Factor - ((SJIF) -7.675, Issue NO, 270 (CCLXX)

आँचलिकता आज केवल पहाड़ों, ग्रामों, सागर तक सीमित नहीं है। वर्तमान स्थिति में 'झुग्गी झोपडियों' के माध्यम से बड़े-बड़े महानगरों तक आ पहुँची है। आँचलिकता राष्ट्रीयता का प्रतिक भी है। देश के विभिन्न अँचल ही मूलतः भारतीय संस्कृति के रक्षक है। वर्तमान जटिल परिवेश और विघटन के बावजुद भी इन्होंने भारतीय संस्कृति को सुरक्षित रखा है। इनमें कहीं भी संकुचित राष्ट्रीयता की भावना नहीं होती बल्कि एकता और सामंजस्य की भावना होती है। इसके कथ्य एवं शिल्प में अन्योन्याश्रित होता है। यथार्थ चित्रण, भौगोलिक-प्राकृतिक परिवेश का अंकन, अँचल की भाषा एवं लोकसंस्कृति को महत्व दिया जाता है।

अतः आँचलिक उपन्यास में किसी अँचल का समग्र और यथार्थ चित्रण होता है। कथानक विस्तृत होता है। भौगोलिक एवं प्राकृतिक परिवेश, लोक-संस्कृति का चित्रण, आत्मीयता, आँचलिक भाषा आदि बातों का चित्रण होता है। परिणामतः पाठकों को अँचलों एवं वहाँ की लोकसंस्कृति को समझने का मौका मिलता है।

निष्कर्षः

अतः हम कह सकते है कि आँचलिक उपन्यासकारों ने साहित्य को गाँवों की मिट्टी से जोड़ने का प्रामाणिक एवं सही प्रयास किया है। वर्तमान परिवेश में अँचलों में अनेक परिवर्तन होने के बावजुद भी भारतीय संस्कृति की सच्ची तस्वीर छुपी है। इन उपन्यासों में प्राकृतिक परिवेश एवं संस्कृति को अधिक महत्व दिया गया है। आँचलिक उपन्यासकारों ने उपेक्षित अँचलों को साहित्यिक मंच प्रदान किया है ।

भारतीय संस्कृति की सच्ची तस्वीर आँचलिकता में छुपी है। उसका प्राणतत्व लोकसंस्कृति है। इसमें रचनाकार आखों देखी को प्रमाणिकता से स्पष्ट करता है। आँचलिक उपन्यासों में अँचल के लोगों की खान-पान, रहन-सहन, वेशभूपा, लोकनृत्य, लोकगीत, लोकसाहित्य, आदि बातों का वास्तविक वर्णन होता है। आँचलिकता आज केवल पहाड़ों, ग्रामों, सागर तक सीमित नहीं है। वर्तमान स्थिति में 'झुग्गी झोपडियों' के माध्यम से बडे - बडे महानगरों तक आ पहुँची है। आँचलिकता राष्ट्रीयता का प्रतिक भी है। वर्तमान जटिल परिवेश और विघटन के बावजूद भी भारतीय संस्कृति को सुरक्षित रखा है। आँचलिक उपन्यासों के माध्यम से पाठकों को अँचलों एवं वहाँ की लोकसंस्कृति को समझने का मौका मिलता है।

रेणूपूर्व (सन् १८९३ से १९५१) के बीच में भी अनेक आँचलिक उपन्यास लिखे गए। परंतु उनमें वह परिपूर्णता नहीं है जो रेणू युग के उपन्यासों में है। रेणू पूर्व युग में भुवनेश्वर मिश्र के 'धराऊ घटना', 'बलवंत भूमिहार', जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी का 'बसंत मालती', हरिऔध का 'अधखिला फूल' आदि उपन्यास लिखे गए। परंतु इन्हें परिपूर्ण नहीं कहा जा सकता। प्रेमचंद के 'गोदान' ने आँचलिक उपन्यासों की निंव डाला है।

रेणू युग (सन् १९५२ से सन १९६६) के बीच अनेक आँचलिक उपन्यास लिखे गए। रेणू को हिंदी आँचलिक उपन्यास सहित्य का 'माईल स्टोन' कहा जाता है। 'मैंला अँचल' ने पाठकों का दिल झकझोर दिया। 'पूर्णिया' जिले के 'मेरीगंज' की कथा केंद्र में रही है। रेणू के अलावा देवेंद्र सत्यार्थी, का 'रथ के पहिए' (१९५३) उदयशंकर भट्ट का 'सागर लहरे और मनुष्य', रांगेय राघव का

'कब तक पुकारू' (१९५८) समदरश मिश्र, 'पानी के प्राचीर' (१९६१), उपेंद्रनाथ अश्क का 'पत्थर अल पत्थर' (१९५७), राजेंद्र अवस्थी का 'सुरज किरण की छांव' (१९५९) आदि रचनाकारों के उपन्यासों में आँचलिक तत्वों का सफल अंकन हुआ हैं। रेणू युग ने अँचल जीवन के विविध आयामों को उद्घाटित किया है।

रेणुत्तर युग में आँचलिक उपन्यासों का विकास तेजी से हुआ है। इसमें परिवर्तनशील आँचलिक जीवन को तराशने का सफल प्रयास हुआ है। इस युग के रचनाओं में शानी का 'शालवनों का द्विप', श्रीलालशुक्ल का 'राग दरवारी' (१९६८), आनंद प्रकाश जैन का 'आठवॉ भॅवर' (१९६९) यादवेंद्र शर्मा का 'हजार घोडों का सवार' (१९७३), विवेकी राय का 'सोनामाटी' (१९८३), तिलकराज गोस्वामी का 'चंदनमाटी' (१९८६), संजीव का 'धार' (१९९०), 'सावधान नीचे आग है', (१९८८), मिथिलेश्वर का 'युद्धस्थल', भगवानदास मोरवाल का 'काला पहाड' आदि उपन्यासों में आँचलिकता का सुंदर चित्रण हुआ है।

संदर्भ संकेत:-

1) डॉ.ह.के.कडवे, 'हिंदी उपन्यासों में ऑचलिकता की प्रवृत्ति', पृ.१८.
2) (सं) डॉ.नगेंद्र, 'भारतीय साहित्य कोश', पृ.८०.
3) राधेश्याम कौशिक, 'हिंदी के ऑचलिक उपन्यास', पृ.८९.
4) कृष्णकुमार बिस्सा, 'साठोत्तरी हिंदी उपन्यासों में राजनीतिक चेतना, पृ.६९.
5) (सं) डॉ.सत्यकाम, 'माटी की महक', विवेकी राय: व्यक्तित्व एवं कृतित्व, पृ.३४.
६द्ध डॉ.बच्चन सिंह, 'आधुनिक हिंदी साहित्य का इतिहास', पृ.३४.